सामाजिक जीवन में मानवीय मूल्य एवम् संस्कृति का महत्व

डॉ.ज्योत्सना सी.रावल*

***वि.एन.एस.बी.एल. ली. आर्ट्स एन्ड कॉमर्स कॉलेज, वडनगर एन्ड, श्री वि.आर.पटेल कॉलेज ऑफ़ कॉमर्स, मेहसाना आर्ट्स एंड कॉमर्स कॉलेज, वडनगर, संस्कृत विभाग**

हमारी संस्कृति विश्व की समस्त संस्कृतियों में अनमोल है । हमारे सनातन मूल्य विश्व के विकास में सहयोगी है। भारतीय संस्कृति विश्व के समस्त संस्कृतियों से पृथक है और प्रेरणा स्त्रोत भी है । जब संपूर्ण विश्व विकास की और अग्रसर हो रहा था तब हमारी वैदिक संस्कृति संपूर्ण कलाओं में निपुण और प्रेरणादायक बनकर खड़ी थी । आज विश्व इस बात को माने या न माने किन्तु विण्टरनिट्ज कहा है "यदि हम अपनी संस्कृति के विकास का अध्ययन करना चाहते है तो हमें भारत जाना चाहिए जहाँ भारोपीय समुदाय का प्राचीनतम साहित्य सुरक्षित है।", " सा प्रथमा संस्कृतिविश्ववारा " इसी सनातन मूल्य किसी भी देश काल से बाधित नहीं हो सकते है । भारतीय संस्कृति ने वैदिक मूल्य को ही अपना आधार माना है । उनका जीवन ही कर्मकाण्ड था ।

हमारा भारत देश शस्त्रबल की अपेक्षा तपस्या को धूर्तता की अपेक्षा सत्य को और धन की अपेक्षा धर्म को अधिक श्रेयस्कर मानता आया है । क्षत्रिय वर्ग को युद्ध का अधिकार था, किन्तु वह अधिकार आत्मरक्षा के लिए था । स्वार्थ के लिए नहीं । दूसरों को पीड़ा देना सदैव ही भारत में निंदा का विषय रहा है ।

ऋत एवं सत्य की भावना व्यापक रूप में अध्यात्म तत्व में देखने को मिलता है । समस्त ब्रह्मांड सत्य के अधीन है । अध्यात्मवाद हमे प्रकृति प्रेम सिखाता है । वैदिक आदर्श सच्चा आदर्श है।

तुलसीदास कहते है परोपकार से बड़ा कोई धर्म नहीं है। दूसरों को पीड़ा पहुँचाने से बड़ा कोई पाप नहीं है । इसलिए इसे वास्तविक धर्म कहा गया है । इशोपनिषद में जगत तत्व की खोज में लगे ऋषियों ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्रो के मानव के कर्तव्य को अपने मंत्र में दर्शाया है ।

इशावस्यमिदं सर्व यत्किचित जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुज्जिता मा गृधः कस्यसिद्धनम् ॥

वैदिक ग्रंथो में मानव के सबसे बड़े गुण संतोष की स्थापना करते हुए कहा गया है । "संतोष परम सुखम" कथोपनिषद् में यमराज नचिकेता से बहुत धन,हाथी,घोड़े,रथ अप्सरायें तथा बहुत बड़ा भू भाग लेने को कहते है । नचिकेता इसे अस्वीकृत करते हुए कहता है, मैं तो आत्मा परमात्मा से सम्बन्धित ही प्रश्न पूछूँगा क्योंकि धन से मनुष्य को संतुष्ट नही किया जा सकता।

नहि वितेननतर्षणियो मनुष्यः ।

नैतिकता की स्थापना हमारे वैदिक ग्रंथो का मूल मंत्र है । न्यायगत शिक्षा न्यायपरक आचरण भारतीय जनमानस की विशेषताएँ रही है किन्तु विदेशी आक्रान्ताओं के कारण आज नीतिगत आचरण में बहुत अधिक परिवर्तन आ गया है।

ब्रजन्ति ते भू धिया: परभवं भवन्ति मापविषु ये नमामिनः ।

नैतिकता में कहा गया है की आपके साथ जो जैसा आचरण करे उसके साथ भी वैसा आचरण करें । द्रौपदी ने राजा युधिष्ठिर से कहा की जो मूढ़ बुद्धि बाले होते है वे धूर्त शढ बुद्धि के लोग से पराजय को उसी प्रकार प्राप्त होते है जैसे कवचहीन शरीर में प्रविष्ट होकर मार देते है ।

भारतीय नागरिकों को मातृभूमि के प्रति अतिशय स्नेह की अनुभूति है । अपारश्रद्धा है। रावण को मारने के प्रश्चात विभीषण राम से लंका का राज्य लेने की प्रार्थना करते है तो भगवान राम लक्ष्मण से कहते है ।

अपि स्वर्गमयी लंका न में लक्ष्मण रोचते ।
जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ॥

भारतीय संस्कृति में संयुक्त परिवार की प्रथा थी । परिवार में सभी मिलजुल कर रहते थे । वैदिक संस्कृति हमें उदारता का पाठ पढाता है और यह उदारता हमें सर्वप्रथम परिवार अर्थात अपने घर मे ही सिखने को मिलता है । हमारी संस्कृति हमे कुटुम्ब के सुख चैन किए लिए स्वार्थ का त्याग सिखाती है ।

"वसुधेव कुटूम्बकम्" कहकर कुटुम्ब के सभी सदस्यों को उनके धर्म, अर्थ, काम के साधन समुचित व्यक्तिगत स्वतंत्रता का आवसर देना और पारस्परिक सहयोग देना है । इसी संस्कृति ने जहाँ वेद की "मातृ देवों भव प्रितृदेवो भवः" जैसी आज्ञाओं का पालन करना सिखाती हैं। वहाँ माता-पिता भी बच्चों के बड़े होने पर मित्रवत् व्यवहार करना नहीं भूलते है। हमारे संस्कार ने ही पति-पत्नी, भाई-बहन और अन्य सगे सम्बन्धीयों के प्रति व्यवहार करना सिखाया है ।

सादगी और शान्ति इस संस्कृति की महान विशेषताएँ है । सादा जीवन उच्च विचार का पाठ हमें इसी संस्कृति ने पढ़ाया है । जीवन स्तर को ऊँचा करने के लिए, अनावश्यक सांसारिक पदार्थो का संग्रह करना यह हमारी संस्कृति ने नहीं सिखाया है। हमारे वेद हमे अपने सुख शान्ति के लिए सांसारिक पदार्थो से अप्रभावित रहने को कही है।

वैदिक बाडमय के अध्ययन से हमें नारी की स्थिति सन्माननीय सर्वोच्य या स्वामिनी के रूप में समाहित है । वैदिक साहित्य में कन्या की कामना समुचित पालन करना प्रत्येक गृहस्थ से किए जाने का विधान है । इसलिए इसका नाम कन्या है। अर्थात सबके द्वारा वंदनीय कहा गया है ।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता ।

आज हमारे सामने सबसे बढ़ी समस्या है । मानवीय मूल्यों को किस प्रकार बनायें रखें।

हम मानव तो है किन्तु मानवता के उन सभी गुणों तथा मानवीय उदारवृत्तियों यथा-सत्य अहिंसा, दया, करुणा, ममता, क्षमा, त्याग, सहिष्णुता, नम्रता, मुदिता परोपकार का ह्रास होता जा रहा है । अतीत की भाँती मन की निर्मलता, हृदय की स्वच्छता तथा विचारों की पवित्रता का नितांत आभाव होता जा रहा है । कारण आज हम अपने पौराणिक धार्मिक ग्रंथ से दूर होते चले जा रहे है । जो हमारे मानवीय मूल्यों की संरक्षिका और सत्पेरिका है । नारी ही इन मूल्यों को धरोहर की भाँती सम्हाल सकती है । इन मानवीय मूल्यों को अनादि काल से सतत प्रवाहित करने में नारी ने महत्वपूर्ण भूमिका अभिनीत की है ।

विनम्रता से मानव की शोभा होती है । क्रोध को जीवन का सबसे बड़ा दुर्गुण माना जाता है । आज इस मानवीय मूल्यों के आभाव में राष्ट्र विग्रह, समाज विघटन, परिवार का टूटना आदि जब बौद्धिकता आध्यात्मिक विकास की और उन्मुख होती तब 'प्रेम, दया, करुणा, ममता, मातृत्व भाव, क्षमा, सहकारिता, सेवा सदभाव जैसे सद्गुण मनुष्य मे उत्पन्न होंगे और वह स्वार्थ को त्याग कर समष्टि के हित के लिए कुछ सोचने एवं करने को विवश अनुभव करेगा, जो किसी भी समाज की सुख शान्ति एवं समृद्धि ही अनिवार्यता है ।

आज समाज पर द्रष्टि डालते है तो पता चलता है कि आज परिवार नामक संस्था को बचाने की आवश्यकता है । आज परिवार में धर्मानुपालन उद्देश्य तो बहुत पीछे छूट गया है । परिणामस्वरूप खण्डित परिवार बच्चे उनमे उत्पन्न अनेक सामाजिक बुरारूपों न अपराध जगत की कुसगति को अपना लेता है । औद्योगिकरण, नगरीकरण, पाश्चात्य संस्कृति के भौतिकवाद के परिणामस्वरूप पिता-पुत्र संबंधो में वैमनस्यता उत्पन्न हो रही है ।

अन्त में हम यह कह सकते है की जीवन के प्रत्येक क्षेत्र की भाँती पारिवारिक जीवन में भी कर्मठता दिखानी चाहिए । ब्रहम मुहूर्त में उठना, शारीरिक,मानसिक शुचिता, धार्मिक कृत्यों का सम्पादन, सात्विक भोजन, यज्ञादि विधान गृहस्थ के दैनिक कर्तव्य कहे गये है । संयुक्त परिवार पद्धति, त्रिवर्ण साधन के रूप में पूर्ण लौकिक उन्नति, व्यष्टि की अपेक्षा समष्टि को महत्व, शिष्टाचार नैतिक एवं पारिवारिक दायित्व बोध आदि जीवन मूल्य प्राचीन काल के समान आज भी प्रासंगिक है । वर्तमान युग की बदलती हुई परिस्थितियों में प्राचीन एवं अर्वाचीन जीवन-शैली में सामंजस्य करना सबसे बड़ी चुनौती है । कार्यशील महिलाओं के लिए इन प्राचीन दायित्वों का निर्वाह असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है । अतः आवश्यकता है एक एसा मध्यम मार्ग अपनाने की जो नवीन होकर भी चिरन्तन हो । परिवार के सुगठित होने से समाज एव राष्ट्र भी संगठित होगा, इसमें संदेह नहीं है ।

संदर्भ सूचि

(1) संस्कृत वाड़मय में राष्ट्रिय एकता एवम लोक कल्याण की अवधारणा, पृ. १६, १६१

(2) संस्कृत लोक कथा में नारी, पृ. २८५

(3) आधुनिक संस्कृत महिला , पृ.१२४
(4) यजुर्वेद , पृ. ४०
(5) मनुस्मृति, पृ.१२१